Received: May '22
Revised:
Accepted: June '22

© 2022 by the authors. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY) license (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

जया जादवानी की कलम से स्त्री विमर्श–नयी परिधि की ओर

आशुतोष शुक्ला
अतिथि विद्वान, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह विश्वविद्यालय, रीवा मध्यप्रदेश

वर्तमान हिंदी साहित्य लेखन में स्त्री विषयक दूसरी महत्वपूर्ण समस्या स्त्री में स्वतंत्र सत्ता की छटपटाहट है। आज की प्रबुद्ध तथा जागरूक स्त्री पुरूष प्रधान भारतीय समाज में पराधीनता के विरूद्ध विद्रोह कर रही है। पुरूष स्वभावतः अहंकारी है। वह अपनी सामाजिक स्थिति को 'सर्वोच्चता' में रखकर देखता है और स्त्री को 'निम्नतर' समझता है। यदि स्त्री ज्यादा पढ़ी–लिखी, जागरूकत और विदुषी है, तो उसकी श्रेष्ठता को सम्भव है खतरा उत्पन्न हो जाए, उसका झूठा अहंकार नष्ट हो जाए। अतः वह कभी नहीं सह सकता कि समाज में स्त्री की स्थिति उससे उच्चतर हो जाए। वह स्त्री को दबाना चाहता है और स्त्री दबाना नहीं चाहती है। वह स्त्री को समाज में बराबरी का दर्जा देने के लिए कदापि तैयार नहीं है। घोर स्वार्थी है। अतएव स्त्री उसके खिलाफ विद्रोह कर रही है।

वस्तुतः स्त्री–चेतना का इतिहास स्त्री के परिवेश और परिस्थितयों के साथ बदलते हुए संदर्भों का, उसके अपने बदले हुए रूख और रवैये का इतिहास है। एक पूर्व निर्धारित या पूर्व स्थापित परिस्थिति से उठकर जिस मानसिकता से स्त्री अपनी नियति या सोच को बदलती गयी है। उसी से हर अगला मोड़ पुरूष समाज में दखल या हस्तक्षेप का अगला कमद है। नारी होने के नाते जया जादवानी का नारी समस्याओं के प्रति सजग होना स्वाभाविक है।

जया जादवानी के तीनों उपन्यासों तथा कई कहानियों के अवलोकन से यह बात विशेष रूप से सामने आजी है कि स्त्री–समानता, स्त्री–शोषण, स्त्री–अधिकार आदि स्त्री जीवन से संबंधित विषयों पर उन्होंने अपने विचार बेहिचक लिखे हैं। उनके लेखन की विशेषता है कि वे हवा में तीर नहीं चलातीं, अर्थात् उनके लेखन में कल्पना की अपेक्षा वास्तविकता या यथार्थ अधिक महत्व रखता है। शकुन से लेकर नमिता तक उनकी प्रत्येक नायिका और उनके आस–पास के पात्र इसी मिट्टी से बने हैं। न उनमें कोई दैवी प्रेरणा है और न ही वे समाज में कोई बड़ी क्रांति लाना चाहते हैं। वे तो बस अपनी समस्याग्रस्त जिन्दगी में अपना अस्तित्व स्थापित करने के लिए संघर्ष करती नजर आजी हैं। यद्यपि वर्तमान हिंदी साहित्य में ही नहीं बल्कि भारतीय साहित्य में स्त्री चेतना का मुद्दा स्त्रियों के अनिर्बंध सेक्स से बहुत आगे जाता नजर नहीं आता किन्तु जया जादवानी के साहित्य में स्त्री की सेक्स–भावना की अपेक्षा उसके जीवन की अन्य महत्वपूर्ण विसंगतियों पर बेबाकी से प्रकाश डालने का प्रयास दिखाई देता है। इसके पीछे जया जादवानी जी की सुलझी हुई विचारधारा है। जया जादवानी जानती हैं कि स्त्रीवाद आधुनिक काल का प्रमुख आन्दोलन है जो स्त्रियों के अधिकारों की हिमायत करता हुआ उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करता है। वह यह भी जानती है कि स्त्रीवाद मूलतः विदेशी भूमि पर जन्मा और विकसित हुआ है और भारतीय संस्कृति की विशेषता यह है कि अन्य संस्कृति की बातें स्वीकारती अवश्य है किन्तु उसके प्रकृत रूप में नहीं बल्कि उस पर कुछ अपने संस्कृति की बातें स्वीकारती अवश्य है किन्तु उसके प्रकृत रूप में नहीं बल्कि उस पर कुछ अपने संस्कार करके। उनके विचार से स्त्री के उन बुनियादी अधिकारों के बारे में बात करना, उस अधिकार को पाने की बात करना, उस अधिकार के बारे में पैरवी करना कि वो अधिकार उनको मिलने चाहिए यही नारीवाद है।

''मुक्ति कहां है मुक्ति ? किससे मुक्ति ? मुक्ति अगर नहीं है तो मर कर भी नहीं है, जीकर भी नहीं। हम सिर्फ अपनी–अपनी इच्छाओं के जोहड़ में से उछलते हैं और दूसरी इच्छाओं के जोहड़ में जा गिरते हैं। यह मुक्ति नहीं है, मुक्ति का सपना है। जिसके पीछे समूचे दर्शन और अध्यात्मक रचे जा रहे हैं।''स्त्री की बदलती मुक्तिकामी सोच को मृदुला गर्ग की रचनाओं में महसूस किया जा सकता है। सामाजिक विसंगतियों, विषमताओं और विद्रूपताओं की तीखी अभिव्यक्ति मंजुल भगत के लेखन की विशिष्ट पहचान है। लेकिन उनकी अभिव्यक्ति में अनावश्यक आक्रोश नहीं है। मानवीय गुणों की अभिव्यक्ति में वे उतनी ही सक्षम हैं। इनकी हर कहानी एक मुकम्मिल बयान होती है।नयी सदी के प्रारंभ में महिलाओं के विकास तथा उन्हें अधिकार सम्पन्न बनाने के क्षेत्र में कुछ कदम उठाये गये हैं। यदि महिलाओं को नयी सहस्त्राब्दी का परिवर्तन कारक प्रतिनिधि बनना है, तो उन्हें बदलते हुए समय की चुनौतियों को स्वीकार करना होगा। तथा इस दिशा में स्वयं सक्रिय भूमिका निभानी होगी। उन्हें मुख्य धारा में जोड़ने तथा पुरूषों के समान सक्षम बनाने की जरूरत है ताकि, वे धैर्यपूर्वक सभी चुनौतियों का मुकाबला कर सकें। समाज में महिलाओं की स्थिति समाज की प्रगति का सूचक होती है। समानता के लिए महिलाओं के संघर्ष का इतिहास अतीत में महिलाओं की स्थिति का प्रमाण है। सामाजिक आर्थिक ढाँचा,

संस्कृति तथा सामाजिक मूल्य समाज में महिलाओं की भूमिका तथा स्थिति का निर्धारण करते हैं।

महिलाओं को आर्थिक व राजनीतिक रूप से समर्थ बनाने की आवश्यकता है, जिससे उनका आत्म–सम्मान बढ़ेगा और समाज में उनकी स्थिति ऊँची होगी। जया जादवानी हिंदी की उन विरल लेखिकाओं में हैं जिनकी रचनाएँ मनुष्य–मन के अंतर्जगत की यात्रा करती हैं। अनुभूतियों के कोमल स्पंदनों को बुनने वाली जया का जन्म 1 मई 1959 को कोतमा, जिला शहडोल (मध्य प्रदेश) में हुआ। बीते दशकों में उन्होंने न सिर्फ लेखन की ऊँचाइयों को छुआ है बल्कि अपने पाठकों–प्रशंसकों का एक वर्ग तैयार किया है।

जीवन की रागात्मकता का उत्सव रचाने वाली, उसे आध्यात्मिक प्रत्ययों की रोशनी में देखने वाली जया को तत्वमसि उपन्यास से लोकप्रियता मिली तो उनके कथा संग्रहों अंदर के पानियों में कोई सपना काँपता है, मुझे ही होना है बार–बार, उससे पूछो तथा मैं अपनी मिट्टी में खड़ी हूँ काँधे पे अपना हल लिये की कहानियों ने द्रवीभूत कर देने वाली संवेदना अर्जित की है। उनमें पैठे कवित्व ने भी भावात्मक वेध्यता की अलग लकीर खींची है। उनके कविता संग्रह मैं शब्द हूँ, अनंत संभावनाओं के बाद भी, व उठाता है कोई एक मुठ्ठी ऐश्वर्य इसका परिचायक हैं। अक्सर एक अलग ही लोक की नागरिक लगती जया सदैव भीतर की पुकारों और धड़कनों को सुनने–गुनने के लिए बेचैन रहती आई हैं। उनकी कई कहानियों पर वृत्तचित्र बने हैं। कई संस्थानों से वे पुरस्कृत औश्र समादृत हैं। जया ने हिमालय के अत्यंत बीहड़ और मनोरम स्थलों की यात्राएँ की हैं। यह यायावरी ही है जिसने उनके मिजाज को झरने–सा उच्छल और पल्लव–सा अनिंद्य बनाया है। उनके भीतर एक ऐसी आतुरता और भावाकुलता साँस लेती है जो सदैव किसी अच्छी रचना के लिए प्रतिश्रुत रहती है।

अशोक बाजपेयी की एक कविता कहती है, शब्द से भी जागती है देह जैसे एक पत्ती के आघात से होती है सबेरा। जया जादवानी की कहानियाँ सचमुच शब्दों से न केवल देह बल्कि समूची चेतना के अस्तित्व को जगा देती हैं। शब्दों–कथनों–सुभाषितों के कोमल आघातों से किस्सागोई में वे ऐसा निखार और उद्वेलन पैदा करती हैं जो कभी–कभी न कहा हुआ न सुना हुआ–सा प्रतीत होता है। अत्यंत काव्यात्मक–से लगने वाले इस कहानी संग्रह मैं अपनी मिट्टी में खड़ी हूँ कांधे पर अपना हल लिये मै उनकी बारह कहानियाँ संकलित हैं। जो जया जादवानी को अरसे से पढ़ते–गुनते आए हैं, वे जानते हैं कि जया के भीतर मानवीय भावनाओं और गहराईयों को छूने–उजागर करने वाला एक ऐसा रसायन प्रभूत मात्रा में मौजूद है जिसके जादू से बच पाना संभव नहीं है।

तत्वमसि के औपन्यासिक विन्यास में जाएँ या अंदर के पानियों में कोई सपना काँपता है की ऐंद्रिय भाषा में रची किस्सागोई में उतरें, जया मनुष्य के अंतःसंसार और संबंधों को अपने अलग अंदाजेबयां से उकेरती हैं। वे मनुष्य की भूख और प्यास पहचानती हैं और उसे जीवन के लिए जरूरी भी मानती हैं। उनके यहाँ न प्रेम वर्जित है, न अध्यात्म, हाँ वे जीवन में प्रेम और सौंदर्य की भूख को सतही मान कर नैतिकता का नाट्य करने वालों के छद्म से बचती हैं। वे अपनी तन्हा अकेली जलती आत्मा की रोशनी में नियति से बँधी स्त्रियों की मानसिक परतंत्रता की परतें खुरचाती हैं, चाहे वह तिश्नगी की बुआ जी हों, या जो सदियों से चुप हैं कि लड़कियाँ या मैं हूँ एक पत्ता शाख से टूटा हुआ तथा ये रास्ता कहाँ जाता है कि साध्वियाँ–जया संसार के बंधनों में जकड़ी स्त्रियों की कंडीशनिंग का जायजा लेती हैं।

हिन्दी साहित्य में महिलाओं द्वारा साहित्य निर्मित का प्रारम्भ लगभग कबीर के युग में हुआ था। कथालेखन के क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश बंग महिला अर्थात् राजेन्द्र बाला घोष से माना जाता है। ममता कालिया, मंजुल भगत, मृदुल गर्ग, शिवनी, मीनाक्षी पुरी, उषा महाजन, अलका सरावगी, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा शेतान, मालती जोशी, चंदकिरण सौनरेक्सा, सूर्यबाला, चंद्रकाता, प्रतिभा जैन, कुसुम अंसल, मणिका मोहिनी, मृणाल पांडे, निरूपमा सेवती, दीप्ति खंडेलवाल, सुनीता जैन, कुसुम अंसल, मणिका मोहिनी, मृणाल पांडे, निरूपमा सेवती, दीप्ति खंडेलवाल, सुनीता जैन, जया जादवानी आदि अनेक लेखिकाओं का साहित्य समाविष्ट होता है। इनमें से अनेक लेखिकाओं ने भारतीय नारी के जीवन की त्रासदी को अपने साहित्य में अभिव्यक्त किया है।

इसके साथ ही पश्चिम के नारी–मुक्ति आन्दोलन तथा नारीवादी विचारधारा से प्रभाव ग्रहण करते हुए उसके परिप्रेक्ष्य में भारतीय नारी को स्वतंत्र कराने की मनीषा भी कुछ लेखिकाओं के साहित्य में दृष्टिगोचर होती है। इसमें दो राय नहीं कि पुरुष निर्मित समाज रचना में आज भी स्त्री को दोयम स्थान प्राप्त है और स्त्री को पुरुष के समकक्ष लाकर ही यह दोयमता मिटाई जा सकती है। हिन्दी लेखिकाओं का एक वर्ग नारीवाद से प्रेरणा ग्रहण कर नारी–स्वातंत्र्य को सीमित अर्थ में लेकर उसे केवल 'आर्थिक आत्मनिर्भता और यौन–स्वच्छंदता 'को ही नारी–मुक्ति के सोपान के रूप में अपने साहित्य में चित्रित करता है। जैसे स्त्री के पास शरीर के अतिरिक्त कुछ और है ही नहीं। तथापि हिन्दी साहित्य में कुछ ऐसी लेखिकाएँ है , जो एक साहित्यकार के उत्तरदायित्व को समझते हुए सही अर्थ में स्त्री–पुरुष समाता की पक्षधर बनती है। ऐसी साहित्यकारों में जया जादवानी का स्थान प्रमुख है। जया जादवानी भारतीय संस्कृति एवं परम्परा की पक्षधर है। तथा विवाह संस्था तथा परिवार संस्था में गहरी आस्था रखती है।

अतः उनके साहित्य में चित्रित नायक–नायिकाओं को सामाजिक नैतिक बंधनों प्रति विद्रोह की छूट नहीं है। जो भी पात्र नैतिकता के बंधनों से विद्रह कर यौन–उच्छंखलता को अपनाता है, उसकी परिणति पतन

हुई दृष्टिगोचर होती है। जया जादवानी की बहुत कम नायिकाएँ पति को छोड़कर दूसरे के साथ घर बसाती है। इसका अर्थ यह नहीं हैं कि जया जादवानी परिवार तथा समाज में पुरुष के वर्चस्व का समर्थन करती है। उनका मानना है कि संबंध–विच्छेद केवल पति–पत्नी को ही अलग नहीं करता अपितु उनकी संतानों के व्यक्तित्व एवं भविष्य को भी छिन्न–भिन्न कर देता है। लेखिका सामाजिक हित की पक्षधर है। अतः वह आपसी सामंजस्य की बात करती है। नारी–मुक्ति के लिए भी पुरुष को विपक्ष बनाना नहीं चाहतीं। भारत में नारी की दश में सुधार लाने का प्रयास सबसे पहले पुरुषों ने ही किया है। धीरे–धीरे पुरुषों की मानसिकता में परिवर्तन कर नारी पुरुष के समकक्ष आ सकती है। पहले की तुलना में आज नारी की स्थिति बेहतर है। नारी की यह बदलती हुई स्थिति एक प्रकार से पुरुष की मानसिकता के परिवर्तन की द्योतक है। अतः परिवर्तन की यह प्रक्रिया यों ही चलती हि तो एक दिन स्त्री–पुरुष विषमता का मुद्दा ही समाप्त हो जाएगा। इसके लिए आवश्यक है कि नारी स्वयं देह की परिधि से ऊपर उठे और अपने मस्तिष्क पर विश्वास करे । इसके तलए यह आवश्यक नहीं कि वह हमारी परम्परा तथा संस्कुति को नकार दें। जो बातें कालबाह्य हो गई हैं उन्हें अवश्य अस्वीकार करना चाहिए, किन्तु पश्चिमी प्रभाव में आकर अपनी संस्कृति को ही नकार देना समझदारी नहीं हैं। जया जादवानी की यह सोच समकालीन महिला कथाकारों में उन्हें विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। उनकी इस सोच को सतही रूप से देखते हुए उन्हें कोई परम्परावादी या दकियानूसी कह सकता है परन्तु सूक्ष्मता से देखें तो उनकी यह विचारधारा गम्भीर चिन्तन का प्रतिफल हैं। ''आज समय पा रही हूँ, मेरे 'स्व' का गर्व और अहंकार ,जो कई बार मुझे पीड़ा की अनुभूति कराता था, गहनतम कामना के उच्चतम शिखर पर भी विलीन नहीं होता था और उसकी मौजूदगी तब भी मेरी छटपटाती यातना बन जाती थी । मैसमढ गई, कामना की अबूझ गहराई हमेशा मुझसे दूर रहेगी। सतह पर होना मेरी विवशता थी,जिसे बाद मे हटाने का मै कृत–संकल्प हो उठी।'' हमारे देश के संदर्भ में भारतीय स्त्री के रूप में स्त्री का विश्लेषण करने से हम सही निष्कर्षो तक नहीं पहुँच सकते। यह नितान्त स्पष्ट है कि स्त्रियों की मुक्ति का आन्दोलन उसकी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक जाति और धर्म के परिप्रेक्ष्य में ही सही ढंग से विश्लेषित किया जा सकता है। क्योंकि यहाँ हर स्त्री का दर्जा बराबर नहीं हैं। एक मजदूर स्त्री और समृद्ध घर में जन्मी स्त्री, एक दलित स्त्री का और ऊँची जाति की स्त्री, एक अल्पसंख्यक सम्प्रदाय की स्त्री और एक बहुसंख्यक वर्ग की स्त्री की सामाजिक स्थितियाँ भिन्न–भिन्न होती है।

यदि हम दोनों अन्तर को नहीं समझेगें तो बहनापे का नारा केवल प्रभुत्वशाली वर्ग के हितों को आगे बढ़ाने वाला नारा बन कर रह जाएगा। हर स्त्री जब मजदूर दलित और अल्पसंख्यक स्त्री के पक्ष में खड़ी होगी तब स्त्रियों का वास्तविक सौहार्द्र होगा, तभी उनमें सही मायने में एकजुटता होगी। केवल जन्म के आधार पर स्त्रियों की एकता की बात करना एक काल्पनिक बात हैं। इसके आधार पर नारी मुक्ति का कोई आन्दोलन ख़ड़ा नहीं हो सकता। समकालीन महिला लेखन में जया जादवानी उस धारा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो समाज में स्त्री की दोयमता की स्थिति को समाप्त करने के साथ–साथ स्त्रियों को उनके उत्तरदायित्वों के प्रति भी सजग कराती हैं।

जया जादवानी के कथा–साहित्य का प्रमुख स्वर 'नारी मुक्ति' है। उनकी यह नारी–मुक्ति स्त्री को सामाजिक परिवेश में दोयमता के स्थान से मुक्त कराकर समाज में पुरुषों के समकक्ष स्थान दिलाने के लिए तैयार है। परन्तु उनकी नारी मुक्ति में नारी के अधिकारों के साथ–साथ उसके कर्तव्यों की भी चर्चा है। पश्चिम के नारीवादी आन्दोलन को भारतीय साहित्य में सीमित अर्थ में लिया गया और केवल अर्थ प्राप्ति तथा यौन–स्वच्छंदता को ही नारी स्वतंत्रता का माध्यम माना गया। इसका चित्रण हमें समकालीन कथा –लेखन में बखूबी मिलता है। इस साहित्य मे साधारणतया ऐसा चित्र उपस्थित हो रहा है कि अर्थप्राप्ति तथा यौनाचार के आगे स्त्री को किसी बात की परवाह नहीं हैं। अतः परिवार व्यवस्था कालबाह्य हो गई है। यदि इस बात को सच मानें तो अब तक भारत में बहुत कम परिवार बचे होत। परन्तु वास्तविकता ऐसी नहीं है। समकालीन साहित्य में स्त्री–स्वतंत्रता को संकुचित अर्थ में तथा भड़कीले रूप में प्रस्तुत किया गया है। आज का स्त्री लेखन आत्माभिव्यक्ति के साथ, समय और परम्परा के अन्वेषण का भी प्रयास है। ऐसे लेखन में पूरी परम्परा, मान्यता और इतिहास क्रम में समाज और उसके विनियमों के साथ स्त्री अपनी नजर से अपने को समझना चाहती हैं।

अभी तक वह अपने को वह मानती रही है जो उसे बताया जाता रहा है। फूको ने शाश्वततावाद को अस्वीकार किया है। क्या हर पल सब कुछ बदलने वाली प्रकृति और सृष्टि में वाकई कुछ भी शाश्वत हो सकता हैं। जब कुछ 'स्थायी' नहीं तो किसी शाश्वत नियम, परम्परा, मान्यता, अनुशासन पर प्रश्नचिन्ह क्यों नहीं लगाये जा सकते! आज के स्त्री लेखन में यदि प्रश्नचिन्हों की भरमार है तो यह अकारण या तर्केतर नहीं। तमाम ऐसे विषय हैं,स्थितियां हैं, अनुभूतियां है, संवेग है जिनके प्रामाणिक या फर्स्टहैण्ड अनुभव स्त्री के पास हो सकते है।

यह अन्यथा नहीं कि स्त्री लेखन में एक तेज स्वर यह भी है कि स्त्री या स्त्री समाज के बारे में महिला लेखन ही प्रामाणिक हो सकती है। इस मान्यता या स्थापना अथवा नारे की अपनी दुर्बलताएं और सीमाएं हो सकती है, इसमें किंचित अतिरेक भी हो सकता है किन्तु स्वानुभूति और सहानुभूति के फर्क को तो हमें ध्यान में रखना ही होगा ।

प्रामाणिक और अप्रामाणिक लेखन आज का एक और विमर्श है और आने वाले समय में यह साहित्य का एक गम्भीर मुद्दा बन सकता है। जया जादवानी का कथा–साहित्य ऊपरी तौर से भले ही किसी वाद सा राजनीतिक प्रतिबद्धता का शोर नहीं करता हो, दरअसल वह मानवीय सरोकारों से गहराई से जुड़ा हुआ है।

समकालीन महिला कथाकारों पर आलाचकों द्वारा जिस तरह के अनुभवों के बारे में सीमा–संकेत किए जाते रहे हैं, जया जी ने उन सभी सीमाओं का अतिक्रमण सहज रूप में किया है। वे जिस कुशलता से घर, परिवार और सम्बन्धों को कथात्मक सौन्दर्य में बाँधती हैं, उसी कुशलता से घर के बाहर निकलकर एक्जीक्यूटिव क्लास विज्ञापन की चकाचौंध भरी दुनिया, दफ्तरों और फ्री–लांसरों की जिन्दगी व साथ–साथ निम्न वर्ग की उस दबी–पिसी जिन्दगी के आर्थिक दबावों तनावों को भी रेखांकित करने में सफल हुई हैं। उनके कथा–साहित्य के अधिकांश पात्र भावुकता की तर्कहीन धारा में न बहकर आर्थिक दबावों के यथार्थ को स्वीकार करते हुए अधिक प्रभावपूर्ण बनते है। आर्थिक दबावों का सीधा प्रभाव आज जिस तेजी से हमारे समाज पर पड़ रहा है, उसे वैविध्यपूर्ण कथ्य और शिल्प के साथ–साथ भाषा के स्तर पर प्रस्तुत करने में जया जादवानी की सजगता उल्लेखनीय है। यही उनका हिन्दी साहित्य के लिए प्रदेय है। ''हर सृजन में विनाश के बीज मौजूद रहते हैं... मनुष्य हो, प्रकृति हो या वस्तुएँ....जन्म का अर्थ ही अपने साथ मृत्यु को चाहे –अनचाहे स्वीकार कर लेना है.... अपने साथ चलने और फलने देना है..... हमसफर की तरह! सभ्यता या संस्कृति कभी कालजयी होने नहीं आतीं, चाहे मनुष्य कितनी भी कोशिश कर ले । एक चक्र चलता रहता है विकास और ह्रास का.... पूर्णता तक....मगर वह पूर्णता अगर हमारे भीतर सम्पन्न नहीं होती तो बाहरी अपूर्णताएँ हमें कभी सन्तुष्ट और कभी असन्तुष्ट करने में लगी रहती हैं.... ''

निष्कर्ष

इस प्रकार, आज का 'नारीवादी साहित्य लेखन' पुरुषों और उसकी कुत्सित अहंवादी चेतना के भीतर विद्यमान स्त्रियों के प्रति वैचारिक व व्यावहारिक स्खलन को उसके पूरे यथार्थ और घृणित रूप में उजागर करने वाला लेखन है। उसकी नारी विषयक दृष्टि भारतीय समाज में विद्यमान भारतीय नारी की चिरन्तन समस्याओं, सरोकारों और संघर्षों को केन्द्र में रख कर पूरी सहानुभूति और स्वानुभूति पूर्वक विचार करके विकसित एवं परिवर्द्धित हुई है। वह नारी की मुक्ति की कामना भर नहीं करती बल्कि उसके संघर्ष में अपना वैचारिक, मानसिक और नैतिक योग भी देती है।

स्वतन्त्रतापूर्व जन्मी नारी विषयक दृष्टि, मानसिक, सामाजिक, वैचारिक आलोड़न आज उस मुकाम को हासिल कर चुका हैं। जो जमीनी स्तर पर हकीकत बन चुका है। यह अनादिकाल से पुरुषवादी सोच और संस्कारों से युक्त समाज द्वारा शोषित वंचित और परित्यक्त नारी की युग –युग की आकांक्षा, अभिलाषा और लालसा बनकर उसके मानस को निरन्तर मथती रही है। इस महान् यज्ञ में न केवल स्त्री–लेखिका, वरन् उसी की तरह प्रगतिशीत और उदात्त सोचवाले अन्य पुरुष–लेखंक पूरी संवेदनशीलता और ईमानदारी से नारी–मुक्ति के स्वप्न को साकार करने में सन्नद्ध है। महिला लेखन पुरुष की बँधी–बँधायी पूर्वाग्रह से संचित दृष्टि को त्याग कर नारी को व्यक्ति रूप में देखने का पक्षहार है जहॉ पुरुष सापेक्ष भूमिकाओं की सीमित पनिधि से मुक्त होकर एक विशुद्ध नारी के रूप में उसकी पहचान सम्भव हो।

संदर्भ सूची

1. तत्वमसि– जया जादवानी, वाणी प्रकाशन, जी. एस. ऑफसेट प्रेस द्वारा प्रकाशित दिल्ली 110032, प्रथम संस्करण 2000
2. कुछ न कुछ छूट जाता है– जया जादवानी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण 2004
3. अन्द के पानियों में कोई सपना काँपता है– जया जादवानी, वाणी प्रकाशन, 21–ए, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002
4. मिठो पाणी खारो पाणी– जया जादवानी, भारतीय ज्ञानपीठ, इन्स्टीट्युशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली–110003 दूसरा संस्करण 2014
5. भारतीय सामाजिक व्यवस्था, राम अहूजा, रावत पब्लिकेशन, जयपुर
6. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में नारी के बदलते संदर्भ– डॉ. शीला रजवार, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
7. जनसंख्या समस्या के स्त्री–पाठक के रास्ते, रवीन्द्र कुमार पाठक, राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली–110002, संस्करण 2010
8. स्त्रीवाद और महिला उपन्यासकार, डॉ. वैशाली देशपांडे, विकास प्रकाशन, कानपुर–27, 2007
9. आठवें तथा नवें दशक के हिन्दी उपन्यासों में नारी, डॉ. वंदना सोपानराव मोहिते, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर–208014, 2007
10. नए उपन्यासों में नये प्रयोग, डॉ. झाल्टे दंगल, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण– 2004
11. हंस – पत्रिका, दिसम्बर–1996,
12. दशवें दशक की महिला उपन्यासकारों में नारी चेतना, वासाणी कृष्णावंती पी, जागृति प्रकाशन, 89–जी, किदवई नगर, कानपुर, 2010